षष्ठम् अध्याय

उपसंहार

षष्ठम् अध्याय

"उपसंहार"

"हिंदी के आँचलिक उपन्यासों में दलित चेतना" ('खारे जल का गाँव', 'मोंगरा', 'सुबह की तलाश', 'जंगल के आसपास' के संदर्भ में) प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध का विषय रहा है। साहित्य को समाज जीवन का 'दर्पण' कहा जाता है। इस दृष्टि से साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध रहा है। मानव जीवन के साथ उपन्यास विधा का गहरा संबंध रहा है। इसी कारण उपन्यास को मानव-जीवन का 'महाकाव्य' कहा जाता है। मानव जीवन और समाज जीवन में होनेवाले परिवर्तन, परिवर्धन, संक्रमण आदि का उपन्यास में यथार्थ रुप में चित्रण करने का कार्य उपन्यासकार कर रहे है। उपेक्षित व्यक्ति, नारी, किसान, मजदूर, दलित आदि की जीवन की कथा, व्यथा उपन्यास के माध्यम से समाज के सामने स्पष्ट करने का कार्य साहित्य के माध्यम से हो रहा है।

आजादी के बाद समाज जीवन में राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि दृष्टि से परिवर्तन होने लगा। साहित्य-विधा भी इस प्रभाव से अलग नहीं रही। परिवर्तित समाज जीवन से प्रभावित साहित्य रहा है। 'आँचलिक उपन्यास' इस परिवर्तन का ही परिणाम है। ग्राम जीवन, नागरी जीवन, विशिष्ट जनजाती का जीवन चित्रण, दलितों का जीवन साहित्य में प्रतिबिंबित होने लगा। स्वातंत्र्योत्तर काल में नई सभ्यता, नई चेतना, नई संस्कृति, नई समाज व्यवस्था के कारण सदियों से पिछड़ा, उपेक्षित, शोषित दलित समाज चेतित बना। इस दलित चेतना का चित्रण करना इस लघु-शोध-प्रबंध का उद्देश रहा है।

भारतीय समाज व्यवस्था और संस्कृति धर्म पर आधारीत है। उसपर जाति व्यवस्था का भी प्रभाव है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य की अपेक्षाा क्षुद्रों को हीन माना है। प्राचीन काल से

परंपरागत ढंग से उनका शोषण हो रहा है। उनका जीवन आज चिंतन का और साहित्य का विषय बना है। आज के साहित्य में दलित जीवन को विशिष्ट स्थान मिला है। मराठी साहित्य में 'दलित साहित्य' का निर्माण इसका प्रमाण है। मराठी साहित्य में 'दलित साहित्य' एक विशिष्ट, महत्वपूर्ण और प्रभावी विधा है। मराठी के समान हिंदी में स्वतंत्र रुप में 'दलित साहित्य' नाम की स्वतंत विधा दिखाई नहीं देती, परंतु यह सच है कि आज धीरे-धीरे साहित्य में दलितों का जीवन चित्रित होने लगा हैं। प्रेमचंद, निराला, भगवतीचरण वर्मा, रांगेय राघव, फणीश्वरनाथ रेणु, अमृतलाल नागर, मदन दीक्षित, नागार्जुन, जगदीशचंद्र, राहुल सांकृत्यायन, सीतारामशरण गुप्त, शिवप्रसाद सिंह, भगवतीप्रसाद शुक्ल आदि अनेक रचनाकारों ने दलित जीवन को वाणी देने का कार्य किया।

स्वातंत्र्योत्तर काल में उपन्यास - विधा लोकप्रिय रही। नई शिक्षा व्यवस्था, सरकार की सुधार नीति, समाजसेवकों का कार्य, नागरीकरण, प्रसार माध्यम आदि के कारण समाज जीवन में होनेवाला परिवर्तन, दलितों में उत्पन्न होनेवाली चेतना आदि का चित्रण उपन्यास में होने लगा। साहित्यिकारों ने इस परिवर्तन को अपने साहित्य में स्पष्ट किया। जातीयता, जातीय भेदाभेद, छुआछूत की भावना, वंशश्रेष्ठता, आदि समाज विघातक प्रवृत्तियों को नष्ट करने का कार्य साहित्य के माध्यम से शुरु हुआ, तो दूसरी ओर दलितोध्दार, दलित जागरण, दलित संगठन, दलित मुक्ति, आरक्षण, समानता, सामाजिक न्याय आदि के रुप में कार्य शुरु हुआ। प्रगतिवादी पात्रों के माध्यम से साहित्यिकारों ने अपने विचार स्पष्ट किए। दलितों का जीवन, उनका होनेवाला शोषण, उनकी समस्या, उनमें उत्पन्न होनेवाली चेतना, नई विचारधारा आदि पर साहित्यिकारों ने प्रकाश डाला है।

भारतीय समाज व्यवस्था का गांव महत्वपूर्ण अंग है। ग्रामव्यवस्था से दलित जुड़ा है। कड़ी मेहतन करनेवाला दलित शोषित और उपेक्षित रहा है। दलित कोई विशिष्ट जाती नहीं। मनुष्य के नाते जिसका जीने का हक छीन लिया है, जो दबा है, कुचला है, रौंदा है उसे

'दलित' कहा जाता है। संत साहित्य ने जातीयता का विरोध किया तो समाजसुधारकों ने सामाजिक एकतापर बल दिया और साहित्यिकारों ने सामाजिक एकता को ताकद दे दी। फुले, शाहु, आम्बेडकर, महर्षि कर्वे, वि.रा. शिंदे, सयाजीराव गायकवाड आदि जैसे अनेक समाज सुधारकों के कार्य के परिणाम स्वरुप दलितों के जीवन में परिवर्तन हुआ। अपने अधिकार की रक्षा के लिए, अस्मिता की सुरक्षा के लिए दलित विद्रोह करने लगा है। आम्बेडकरजी के 'संगठित बनो - संघर्ष करो' इस नारे से दलित समाज जाग उठा। धर्म - परिवर्तन, कालाराम मंदिर प्रवेश, महाड़ का आंदोलन, आदि घटना से दलित प्रभावित हुआ। शिक्षित दलित में भी विद्रोह का भाव पनप उठा। वही विद्रोह चेतना के रुप में दिखाई देता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में होनेवाले परिवर्तन से वह प्रभावित होता है। साहित्यिकार भी अपने अनुभूति के बलपर सामाजिक परिवर्तन को चित्रित करता है। सामाजिक परिवर्तन में और समाज क्रांति में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सामाजिक संगठन और जातीय एकता के लिए उन्होंने निरंतर योग दिया है। साहित्य शाश्वत सत्य की स्थापना करता है। इसीकारण यह कहा जाता है, वही राष्ट्र महान बनता है, जिसका साहित्य श्रेष्ठ है। साहित्य जाति, काल, परिस्थिति, प्रदेश आदि के बंधन से मुक्त होता है। उसका लक्ष्य समाज का हित ही रहता है। इसीकारण दलित का जीवन भी साहित्य का विषय बना। पत्थर तोड़नेवाली, मजदूरी करनेवाली विधवा नारी भी साहित्य का विषय बनी। साहित्यिकार सिर्फ चित्रण नहीं करता बल्कि भविष्य का संकेत भी देता है। इसलिए उसे 'भविष्य दृष्टा' कहा जाता है। मानव की समस्त चेतना का प्रतिक साहित्य रहा है। उसे सामाजिक विरासत भी कहा जाता है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में साहित्य में नईं-नईं प्रवृत्तियाँ पैदा हो गयी। आँचलिक उपन्यास इसी प्रवृत्ति का एक परिणाम है। आँचलिक उपन्यासों में विशिष्ट भूभाग या विशिष्ट जाति का चित्रण होता है। 'अंचल' नायक बनकर अपनी व्यथा-कथा स्पष्ट करता है। इसी प्रवृत्ति के कारण आदिम, आदिवासी, दलित, जंगली जनजीवन का चित्रण साहित्य में होने लगा। उस प्रदेश की स्थिति, संस्कृति, प्रकृति, विकृति, चेतना, जीवनमूल्य आदि सभी का चित्रण साहित्य में होने लगा।

समाज वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा मनुष्य अपना जीवन सहज और स्वाभाविक रुप में व्यतित कर सकता है। समाज एक सामाजिक संस्था है। मनुष्य उसका एक अंग है। अत: साहित्यिकार समाज व्यवस्था से जुड़ा एक मानव है। इसीकारण साहित्य में समाज जीवन का चित्रांकन होता है। भारतीय समाज व्यवस्था में दलित समाज का अपना एक विशिष्ट स्थान है। दलितों की परिभाषा करने का कार्य अनेक समीक्षकों ने, समाजशास्त्रीयों ने किया, परंतु यह स्पष्ट है कि सभी प्रकार के शोषित, अधिकारों से वंचित वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था से शापित कोई भी मनुष्य एवं जाति 'दलित' ही है। आज 'सर्वहारा वर्ग' को भी दलित माना है। आज विश्व साहित्य में भी दलित साहित्य की विस्तृत व्याख्या हो रही है। धन, धर्म, वर्ण, कर्म, देश, वंश, कुल, सत्ता, पद, अधिकार से वंचित, अपमानित, उपेक्षित, शोषित, सर्वहारा, व्यक्ति को 'दलित' कहा जाता है। दलित शब्द से भारतीय समाज व्यवस्था का रुप स्पष्ट होता है। गांधीजी ने इसके लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया तो कई जगह अस्पृश्य, दास, गुलाम आदि शब्दों का भी प्रयोग हो रहा है।

प्राचीन काल से लेकर आज तक दलितों का जीवन शोषण की व्यथा-कथा रहा है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक क्षेत्र में उसका शोषण हो रहा है। धन के अभाव के कारण यह समाज अप्रगत रहा। उनमें अशिक्षा के कारण अनेक समस्याएँ पैदा हो गयी। आजादी के आंदोलन में राजनीतिक आजादी के साथ-साथ सामाजिक समता की माँग प्रभावी बनी। आजादी के आंदोलन में दलित समाज भी सक्रिय रहा। डॉ. बाबासाहब आम्बेडकर ने दलित संगठनपर बल दिया, उनमें चेतना लाने का कार्य किया। सिध्द, नाथ, संत, महंत् ने जातीय एकता पर बल दिया। उसके पश्चात समाज सुधारक, राजनीतिक नेता, दार्शनिकों ने दलितोद्धार को एक राष्ट्रीय कार्य मानकर सामाजिक समता स्थापित करने का प्रयास किया। धीरे-धीरे दलितों में नईं विचार-धारा, नई मान्यता, संगठन, राजनीतिक जागरुकता, शिक्षा प्रसार आदि के कारण जागृति बढ़ने लगी। प्राचीन काल से लांछित दलित जाग उठा। दलितों में से ही राजनीतिक नेतृत्व उभरकर सामने आने लगा। चेतित दलित समाज की यही निशानी है। यहाँ

स्पष्ट है भारतीय समाज व्यवस्था से धीरे-धीरे जातीयता नष्ट होने का कार्य शुरु हुआ। सामाजिक एकता का कार्य प्रारंभ हुआ। साहित्यिकारों ने सामाजिक प्रतिबध्दता निभाते हुए दलितों में चेतना जागृत करने का कार्य किया। दलित साहित्य सामाजिक परिवर्तन की देन है, ऐसा लगता है।

साहित्य में दलितों का जीवन चित्रित करने वाले साहित्यिकारों में भगवतीप्रसाद शुक्ल का 'खारे जल का गाँव', शिवशंकर शुक्ल का 'मोंगरा', नरेंद्रदेव वर्मा का 'सुबह की तलाश', राकेश वत्स का 'जंगल के आसपास' आदि कृतियाँ महत्वपूर्ण है। इन उपन्यासों में दलितों का जीवन, उनमें उत्पन्न चेतना, शिक्षाप्रसार की भावना, प्रबल होनेवाली संगठन शक्ति आदि का चित्रण हुआ है। दलितों की मानसिकता, परिवर्तित मान्यता और सामाजिक दृष्टिकोण भी यथार्थ रुप में चित्रित किया है। दलितों का पनघट अलग होना, मंदिर प्रवेश निषिध होना, पाठशाला के बाहर बिठाना, बच्चों का नामकरण भगवान के नाम से न करना, दलितों के स्पर्श से भगवान का अपवित्र होना, आवास की व्यवस्था गाँव के बाहर होना आदि सभी घटनाओं का यहाँ चित्रण हुआ है। साहित्यिकारों ने इस शोषित जीवन के साथ-साथ उनमें उत्पन्न होनेवाली नई चेतना को भी चित्रित किया है। अवैध धंधों का विरोध करनेवाली मोंगरा, चमार बस्ती में प्रौढ़ शिक्षा खोलनेवाला सोमेश्वर, सहकारी उपभोक्ता भांडार खोलनेवाला अरविंद, पुलिस की मनमानी का विरोध करनेवाला सुग्रीव और नारी संगठन करनेवाली श्यामा नई चेतना के प्रतिक है। अरविंद, दिनेश और सोमेश्वर शिक्षा प्रसार पर बल देते है। यहाँ स्पष्ट है जब दलित शिक्षित बनेगा तब संगठित होगा और अपने हक के लिए संघर्ष करेगा। समाज व्यवस्था में बदलाव लाएगा, ऐसा लगता है।

दलितों का जीवन शोषण की व्यथा-कथा रहा है। धन, धर्म, सत्ता और अधिकार के नामपर उनका शोषण हो रहा है। साहित्यिकारों ने दलितों की समस्यापर भी सोचा है। दलितों में अंध:विश्वास की मात्रा अधिक है। शकुन-अपशकुन पर भी विश्वास रखते हैं। परिणामत: पाप पुण्य की भावना उनमें प्रभावी है। अपने जीवन में घटनेवाली घटना का संबंध

भविष्य में घटनेवाली घटना के साथ वे जोड़ देते है। परिणामत: अंध:विश्वास बढ़ता है। संतान की प्राप्ती के लिए, बिमारी हटाने के लिए, संकट से मुक्ति के लिए वे देवी देवता का आधार लेते है। दवा की अपेक्षा दुवापर विश्वास रखते है। जमींदार, पुलिस के अमानवीय व्यवहार से शोषित दलित रहा है परंतु आज जन आंदोलन के माध्यम से दलित समाज शोषण की समस्या से मुक्ति पा रहा है। आज दलितों में जातीय भेदाभेद, भ्रष्टाचार, अशिक्षा, भौतिक सुविधाओं का अभाव आदि कई समस्याएँ दिखाई देती है। आजादी के बाद सरकार की उदारनीति, समाजवादी समाजरचना की स्थापना, समाजसेवी व्यक्तियों का कार्य आदि के कारण यह समस्याएँ हल हो रही है, परंतु यह सच है कि सभी समस्या की जड़ अशिक्षा है। शिक्षा प्रसार सभी समस्यापर उपाय है। आलोच्य उपन्यासों में उपन्यासकारों ने मुफ्त शिक्षा, प्रौढ शिक्षा, बुनियादी शिक्षा पर बल दिया है।

आजादी के बाद सामाजिक परिवर्तन में दलितों के जीवन में भी परिवर्तन होने लगा। उनका जीवन जिसप्रकार साहित्य का विषय बना उसीप्रकार चेतना का भी लक्ष्य रहा है। परंपरा से पीड़ित समाज प्रेरणा के कारण जाग उठा। आत्मचेतना से सन्मानित हुआ। पशुतुल्य, अमानवीय, बहिष्कृत जीवन जीनेवाला दलित सामाजिक क्रांति के लिए संगठित बना। आजादी के आंदोलन में भी वह सक्रिय रहा। सिध्द, नाथ, संत परंपरा से प्रेरणा प्राप्त करके, समाज सुधारकों के कार्य से सबल होकर दलित समाज विकास के पथपर चलने लगा। दलित जागरण और दलित उद्धार एक राष्ट्रीय कर्म बना। नवजागरणकाल, राजनीतिक आंदोलन, राष्ट्रीय एकता, शिक्षा प्रसार, पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव, राजनीतिक नेताओं का कार्य, प्रसार माध्यमों का योगदान, प्रगतिवादी और मार्क्सवादी विचारों का प्रभाव आदि के कारण दलित समाज जाग उठा। यह सच है कि दलितों का उध्दार सिर्फ संविधान के बलपर नहीं होगा इसके लिए दलितों में आत्मचेतना की भावना पैदा होनी चाहिए। दलितों का संगठन, राजनीतिक आरक्षण तथा दलित उद्धार के लिए सर्वस्व समर्पण की भावना ही दलितों का उद्धार करेगी। समाजवादी समाजरचना के लिए दलित चेतना आवश्यक है। यह दलित चेतना राष्ट्रहित और जनहित के

लिए कल्याणकारी है। आलोच्य उपन्यासों में दलित चेतना पर प्रकाश डाला है। नए व्यवसाय करनेवाले, जातिप्रथा को ठुकरानेवाले, जमींदारों की मनमानी का मुकाबला करनेवाले, शिक्षाप्रसार करनेवाले पात्र रहे है। शिवशंकर शुक्ल के 'मोंगरा' की मोंगरा, चरणदास भगवतीप्रसाद शुक्ल के 'खारे जल का गाँव' का अरविंद, जमुना मास्टर, सुग्रीव, चनकी, नरेंद्रदेव वर्मा के 'सुबह की तलाश' का फगुवा पंडित, सोमेश्वर, फगुवा की माँ, राकेश वत्स के 'जंगल के आसपास' की श्यामा, उनकी माँ, अध्यापक दिनेश आदि इसीप्रकार के पात्र है। वे दलित जागरण, दलित उद्धार, दलित आंदोलन, दलित संगठन का कार्य करते है। ये सभी पात्र प्रगतिवाद से प्रभावित है। जब तक समानता की स्थापना नहीं होगी तब तक सामाजिक एकता का होना कठिन है। इस बात को उपन्यासकार ने यहाँ स्पष्ट किया है। आज धीरे-धीरे दलितों में चेतना की लहर दौड़ रही है। विकास की धारा बह रही है, ऐसा लगता है।

आज धीरे-धीरे दलित समाज में सामाजिक क्रांति की प्रतिक्रिया निर्माण हो रही है। सामाजिक विषमता, अन्याय, अभावग्रस्तता, हीनता के प्रति विद्रोह पनप रहा है। सामाजिक क्रांति का पहिया वे घूमाना चाहते है। क्रांतिकारकों का कार्य, मार्क्सवाद का प्रभाव, रुस की क्रांति, मजदूरों का आंदोलन, साम्राज्यवाद का ऱ्हास आदि के कारण सामाजिक क्रांति प्रबल हुई। भारत देश में सामाजिक क्रांति के दूत के रुप में आम्बेडकरजी का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। उन्होंने राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक आदि सभी क्षेत्रों में दलित समाज को विकसित एवं संगठित करने का कार्य किया। इसी कार्य में साहित्यिकारों ने भी अपना योगदान दिया। प्रगतिवादी पात्रों का निर्माण करके अपने विचारों का प्रतिपादन किया। जातीयता, भेदाभेद, शोषण आदि दमनचक्र को जड़ से उखाड़ फेंकने का कार्य किया। साहित्यिकारों ने नई चेतना से प्रभावित होकर बदलती सामाजिक मान्यताओं का भी चित्रण किया। साहित्य का यह नया रुप प्रगतीशील समाज का प्रतिक लगता है। कई साहित्यिकारों ने सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ मिशनरी प्रवृत्तिपर भी प्रहार किया है। दलितों की कितनी समस्याएँ हल हो चुकी है? स्वतंत्र भारत में दलितों का क्या स्थान है? संविधान से उन्हें कितना लाभ हुआ? आदि

प्रश्नों पर प्रकाश डाला है। अत: स्पष्ट है सामाजिक समता, समानता के पक्षधर साहित्यिकार है। आलोच्य उपन्यासकारों ने विभिन्न अंचलों में स्थित दलित जीवन का चित्रण करके उनमें उत्पन्न होनेवाली चेतना को यथार्थ रुप में अव्यक्त किया है। राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक सभी स्तरों पर यह चेतना प्रबल बन रही है। स्पष्ट है सामाजिक क्रांति एवं सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में साहित्यिकारों ने अपना योगदान दिया है।

आलोच्य उपन्यासों में चेतित पात्र शिवशंकर शुक्ल के 'मोंगरा' की मोंगरा अवैध धंधे का विरोध करती है। बाह्मण मंगलू चमार चरणदास को सहारा देता है। चमार चरणदास सरकारी कर्ज लेकर नया व्यवसाय करता है।

भगवतीप्रसाद शुक्ल के 'खारे जल का गाँव' का अरविंद चमरहाटी में प्रौढ़ शिक्षा केंद्र शुरु करता है, क्रांतिकारी मोर्चा बनाकर चुनाव लड़ता है, मजदूरों का संगठन बनाता है। चनकी किस्सूसिंह के अन्याय का विरोध करती है, तो सुग्रीव दलितों के मंदिर प्रवेश निषेध का विरोध करता है। जाति पंचायत के निर्णय को ठुकराता है। अर्थात सामाजिक क्रांति में सहयोग देता है।

नरेंद्रदेव वर्मा की 'सुबह की तलाश' का फगुवा पंडित जनआंदोलन की भूमीका निर्माण करता है, तो सोमेश्वर बुनियादी शिक्षा का प्रचार करता है। सुहागा रामअधार ठाकुरों की मनमानी का ड़टकर विरोध करते है।

राकेश वत्स के 'जंगल के आसपास' की श्यामा, सुचित्रा, दिनेश नारी का संगठन करके जातीयता, भेदाभेद, जमींदारों की मनमानी आदि का विरोध करती है। यहाँ नारी संगठन होना एक महत्वपूर्ण घटना लगती है। श्यामा नारी संगठन के बलपर ही सरपंच रामदास को पराजित करती है।

अत: स्पष्ट है कि आलोच्य उपन्यासकारों ने आलोच्य उपन्यासों में दलित जीवन, उनकी स्थिति, उनकी समस्या, उनका होनेवाला शोषण, उनकी चेतना आदि का यथार्थ चित्रण किया है। आलोच्य उपन्याकारोंने अपनी रचना में प्रगतिवादी, आंबेडकरी विचारों के वाहक पात्र चित्रित करके सामाजिक क्रांति को दिशा देने का राष्ट्रीय कार्य किया है ऐसा लगता है। सामाजिक क्रांति, सामाजिक परिवर्तन और समाज में आनेवाले बदलाव को उपन्यासकारों ने चित्रित किया है। उनके पात्र सामाजिक क्रांति के दूत लगते है। पात्र दलित चेतना के प्रतिक लगते है। आलोच्य उपन्यासों में दलित जीवन की झाँकी दिखाई देती है। आलोच्य उपन्यास दलितों में उत्पन्न चेतना को यथार्थ शब्दों में व्यक्त करने में सफल रहे है तथा यह उपन्यास दलित जीवन एवं दलित चेतना का दर्पण ही है ऐसा लगता है।